शिक्षा के मुख्य दोष
(CHIEF DEFECTS OF EDUCATION)

टी० एन० सिक्वेरा का कथन है—**"भारत पर मुसलमानों की विजय इस्लामी-शिक्षा के उस अन्धकारपूर्ण युग की समकालीन थी, जबकि विद्यालयों ने अपने व्यापक सांस्कृतिक आदर्शों को खो दिया था।"**

"The Muslim conquest of India coincided with a dark age in Islamic education when the schools had lost their wider ideals of culture."

—**T. N. Siqueira** : *op. cit.*, p. 9.

सिक्वेरा के इस कथन को ध्यान में रखते हुए हम कह सकते हैं कि मुस्लिम-शिक्षा दोषमुक्त नहीं थी। हम उसके मुख्य दोषों की चर्चा निम्नांकित पंक्तियों में यथास्थान कर रहे हैं—

1. शिक्षा के लौकिक पक्ष पर बल (Stress on Secular Aspect of Education)—मुस्लिम-शिक्षा में धर्म का मूर्धन्य स्थान था। किन्तु, इस्लाम धर्म पारलौकिक जीवन की अपेक्षा इहलौकिक जीवन को महत्त्व देता है। अतः मुस्लिम युग में शिक्षा के लौकिक पक्ष को प्रधानता दी गई और शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य यह स्वीकार किया गया—छात्रों को ज्ञान से सम्पन्न करके समाज में सुयश और राज्य में श्रेष्ठ पद प्राप्त करने की योग्यता प्रदान करना, ताकि वे सभी सांसारिक सुखों और ऐश्वर्यों का उपभोग कर सकें। छात्र भी अपने समक्ष इसी उद्देश्य को रख कर, कठोर परिश्रम द्वारा ज्ञान का अर्जन करते थे और अपनी योग्यता में अधिक-से-अधिक वृद्धि करने के लिए प्रति क्षण प्रयत्नशील रहते थे।

2. स्त्री-शिक्षा की उपेक्षा (Neglect of Women's Education)—मुस्लिम युग में पर्दे की प्रथा के कारण स्त्री-शिक्षा का प्रसार नहीं हुआ। जनसाधारण की बालिकाएँ अपने मुहल्लों के मकतबों में बालकों के साथ थोड़ा-सा पढ़ना और लिखना सीख लेती थीं। इसके अतिरिक्त, उनकी शिक्षा के लिए राज्य या समाज की ओर से कोई प्रबन्ध नहीं था। राजकुलों और धनी परिवारों की बालिकाओं और स्त्रियों को उनके घरों पर शिक्षा दी जाती थी। पर इनकी संख्या अत्यन्त अल्प थी।

इस प्रकार, हम कह सकते हैं कि मुस्लिम-काल में सामान्य रूप से स्त्रियों की शिक्षा की पूर्ण उपेक्षा की गई। इसका परिणाम बताते हुए, **टी० एन० सिक्वेरा** ने लिखा है—**"स्त्रियों की शिक्षा पढ़ने और लिखने के न्यूनतम तत्वों की संकुचित स्थिति में पहुँच गई थी।"**

"Education of women was reduced to the barest elements of reading and writing."

—**T. N. Siqueira** : *op. cit.* p. 139.

3. प्रान्तीय भाषाओं की उपेक्षा (Neglect of Vernaculars)—मुस्लिम-शिक्षा-पद्धति में फारसी और अरबी का शीर्षस्थ स्थान था। मकतबों में बालकों को फारसी की वर्णमाला सिखाई जाती थी और कुरान की आयतें रटाई जाती थीं। मदरसों में उच्च शिक्षा का माध्यम—फारसी थी। फारसी सम्पूर्ण मुस्लिम-काल में राजभाषा थी। राजपदों पर उन्हीं लोगों को आसीन किया जाता था जिनको फारसी का पूर्ण ज्ञान और अरबी का पर्याप्त ज्ञान होता था। अतः इन पदों के

Scanned with CamScanner

लिए इच्छुक न केवल मुसलमानों, वरन् हिन्दुओं को भी फारसी और अरबी का अनिवार्य रूप से अध्ययन करना पड़ता था। इन सब बातों का परिणाम यह हुआ कि प्रान्तीय भाषाओं के प्रति रंचमात्र भी ध्यान नहीं दिया गया। फलस्वरूप उनका विकास अवरुद्ध हो गया।

अकबर ने अपनी हिन्दू-नीति के कारण इस बात की चेष्टा की कि विद्यालयों में फारसी के अतिरिक्त हिन्दी की भी शिक्षा दी जाय। उसकी चेष्टा के परिणामस्वरूप हिन्दी को प्रोत्साहन तो अवश्य प्राप्त हुआ पर उसकी प्रगति को संतोषजनक नहीं कहा जा सकता है। औरंगजेब ने प्रान्तीय भाषाओं, मुख्यतः उर्दू में शिक्षण और रचना को प्रोत्साहित किया, पर उसे अपने कार्य में विशेष सफलता प्राप्त नहीं हुई। वस्तुतः इन दोनों मुगल सम्राटों के प्रयासों का फारसी और अरबी की स्थिति पर केवल अस्थायी प्रभाव पड़ा। इन दोनों भाषाओं की प्रधानता पूर्ववत् बनी रही और प्रान्तीय भाषाओं की पहले के समान उपेक्षा की गई।

4. हिन्दुओं की शिक्षा की उपेक्षा (Neglect of Education of Hindus)—आरम्भ में मुस्लिम-शिक्षा केवल उन अल्पसंख्यकों को ही उपलब्ध थी, जो इस्लाम धर्म के अनुगामी थे। सिकन्दर लोदी के शासन-काल में मकतबों और मदरसों के द्वार हिन्दुओं के लिए भी खोल दिये थे; पर वहाँ उनके साथ समानता का व्यवहार नहीं किया जाता था। केवल—अकबर के शासन-काल में हिन्दू बालकों को मुस्लिम शिक्षा-संस्थाओं में स्वतन्त्रापूर्वक शिक्षा ग्रहण करने का अवसर प्राप्त हुआ। जहाँ तक हिन्दू शिक्षा-पद्धति का सम्बन्ध था, उसको अनेक मुसलमान शासकों ने नष्ट करने का भरसक प्रयत्न किया।

इस प्रकार, हम कह सकते हैं कि लगभग सम्पूर्ण मुस्लिम-युग में हिन्दुओं को शिक्षा प्राप्त करने का अवसर उपलब्ध नहीं हुआ और मुस्लिम शासकों द्वारा उनकी शिक्षा की उपेक्षा की गई। हिन्दुओं की शिक्षा से सम्बन्धित उनकी नीति का वर्णन करते हुए **टी० एन० सिक्वेरा** ने लिखा है—"मुसलमान शासकों को अपनी हिन्दू प्रजा की शिक्षा के विषय में दो बातों में से एक का निश्चय करना पड़ा—हिन्दुओं की शिक्षा की उपेक्षा करना या उनके लिए पृथक् विद्यालयों की स्थापना करना। अधिकांश मुस्लिम शासकों ने उनकी शिक्षा की उपेक्षा की, उनकी शिक्षा-संस्थाओं को आर्थिक सहायता नहीं दी और उनके लिए नवीन विद्यालयों का निर्माण नहीं किया। अकबर के समान बहुत ही कम शासकों ने हिन्दुओं की शिक्षा को प्रोत्साहित किया।"

5. शिक्षा के आध्यात्मिक पक्ष की उपेक्षा (Neglect of Spiritual Aspect of Education)—मुस्लिम शिक्षा धर्म-प्रधान थी। छात्रों को अपने सम्पूर्ण अध्ययन-काल में कुरान शरीफ की नियमित रूप से शिक्षा दी जाती थी। किन्तु, इस शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य—उनमें धार्मिकता की भावना का समावेश करना था, न कि उनका आध्यात्मिक विकास करना।

इस प्रकार, मुस्लिम युग में शिक्षा के आध्यात्मिक पक्ष की प्रायः पूर्ण उपेक्षा की गई। परिणामतः मुस्लिम-शिक्षा आध्यात्मिक उन्नति के उस शिखर से बहुत नीचे रह गई, जिस पर प्राचीन भारतीय शिक्षा पहुँच गई थी और जिनके कारण भारत को विश्व का आध्यात्मिक गुरु माना जाता था।

6. शिक्षा में स्थिरता का अभाव (Lack of Stability in Education)—इस्लाम-धर्म में अडिग आस्था रखने के कारण मुसलमान माता-पिता अपने बच्चों के लिए शिक्षा को अनिवार्य मानते थे। परन्तु जैसा कि **टी० एन० सिक्वेरा** ने लिखा है—**"न तो माता-पिता ने और न शासकों ने अपने कर्त्तव्य का विधिपूर्वक पालन किया। एक शासक या राजकुमार, विद्यालयों की स्थापना करता था और दूसरा यदि उनको नष्ट नहीं करतः था, तो बन्द अवश्य कर देता था।"**

Scanned with CamScanner

सिक्वेरा के कथन से सिद्ध हो जाता है कि मुस्लिम शासकों की शिक्षा-सम्बन्धी नीति में स्थिरता और क्रम बद्धता का नितान्त अभाव था। यही कारण था कि यदि एक शासक के समय में शिक्षा पुष्पित होती थी, तो दूसरे शासक के समय में कुम्हला जाती थी। शिक्षा के इस अस्थिर स्वरूप का कारण बताते हुए **डॉ० एफ० ई० केई** ने लिखा है—**"शिक्षा का अस्थिर और अनिश्चित स्वरूप मुख्यतः निरंकुश शासन का परिणाम था।"**

7. शिक्षा में व्यापकता का अभाव (Lack of Universality in Education)—मुस्लिम युग में शिक्षा को इस्लाम-धर्म के सिद्धान्तों के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनिवार्य माना जाता था और उसे राज्य का संरक्षण भी प्राप्त था। फिर भी, वह व्यापक रूप धारण न कर सकी। इसके आधारभूत कारण पाँच थे; यथा—

पहला, मुस्लिम-शिक्षा की व्यवस्था केवल नगरों और बड़े कस्बों में की गई थी, जहाँ मुसलमानों की अधिकांश जनसंख्या निवास करती थी। **दूसरा,** मुस्लिम शासकों को जनसाधारण की शिक्षा में लेशमात्र भी रुचि नहीं थी। अतः नगरों और कस्बों से दूर के स्थानों में न तो मुस्लिम-शिक्षा का आविर्भाव हुआ और न विकास। **तीसरा,** दान धर्म और उदारता से प्रेरित होकर मुस्लिम शासकों और उनके अमीर-उमरावों ने केवल महत्त्वपूर्ण स्थानों पर ही मकतबों और मदरसों का निर्माण किया। **चौथा,** मुस्लिम शिक्षा-संस्थाओं में प्रदान की जाने वाली शिक्षा पर धार्मिक कट्टरता की इतनी गहरी और व्यापक छाप थी कि हिन्दू बालक उससे लाभान्वित न हो सके। **पाँचवाँ,** मुस्लिम युग में शिक्षा-संस्थाओं की संख्या बहुत कम थी। अतः केवल धनी और प्रभावशाली व्यक्तियों के बालकों को ही उनमें प्रवेश मिलता था। फलस्वरूप, सामान्य व्यक्तियों के बालकों के लिए शिक्षा प्राप्त करने का कोई साधन नहीं था। ऐसी स्थिति में शिक्षा में व्यापकता का अभाव होना स्वाभाविक था।

8. कठोर शारीरिक दण्ड (Severe Corporal Punishment)—मुस्लिम शिक्षा-व्यवस्था में कठोर दण्ड की प्रथा प्रचलित थी। छात्रों को पाठ याद न होने पर या अन्य अपराध करने पर बेंत, कोड़े, घूँसे, लात, थप्पड़ आदि से शारीरिक दण्ड दिया जाता था। यदि वे कोई भीषण अपराध करते थे, तो उनको विभिन्न प्रकार की शारीरिक यातनाएँ दी जाती थीं।

एडम (Adam) ने अपनी "Reports" में कुछ शारीरिक यातनाओं का वर्णन इस प्रकार किया है—छात्र को मुर्गा बनाना, उसकी पीठ या गर्दन या दोनों पर निश्चित समय के लिए ईंट या लकड़ी का भारी टुकड़ा रखना, उसे पैरों के बल वृक्ष की शाखा से लटकाना, उसे बिल्ली या अन्य किसी कष्टदायक पशु के साथ बोरे में बन्द करना, उसे भूमि पर पेट के बल लेट कर अपने शरीर को निश्चित दूरी तक घसीटना।

ये सभी दण्ड निष्ठुर एवं अमानवीय होने के साथ-साथ अमनोवैज्ञानिक और शिक्षा-सिद्धान्तों के प्रतिकूल थे। इस प्रकार के दण्ड दिए जाने का कारण यह था कि राज्य की ओर से कोई दण्ड विधान निर्धारित नहीं था। अतः शिक्षक अपनी व्यक्तिगत इच्छा के अनुसार छात्रों को कोई भी दण्ड देने के लिए पूर्णतया स्वतन्त्र थे।

9. छात्रों की विलासप्रियता (Student's Love of Luxury)—प्राचीन काल की भाँति मुस्लिम काल में छात्रों को कठोर और तपस्वी जीवन व्यतीत नहीं करना पड़ता था। उन्हें छात्रावासों में अनेक प्रकार के सुख-साधन और सौन्दर्य-प्रसाधन की सुविधाएँ उपलब्ध थीं। फलस्वरूप, वे कुछ ही समय में इतने विलासी बन जाते थे कि वे सुखभोग के वास्तविक जीवन से पृथक् किसी अन्य जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकते थे। यही कारण था कि

उनमें आत्म-त्याग, आत्म-निर्भरता और आत्म-अनुशासन आदि सद्‌गुणों के एक भी चिन्ह की झलक दुलर्भ थी।

10. अन्य दोष (Other Defects)—उपर्युक्त के अतिरिक्त मुस्लिम शिक्षा-पद्धति में कुछ अन्य दोष और थे; यथा—

पहला, बालकों को मकतबों में कुरान की आयतें कण्ठस्थ कराई जाती थीं, जिनका अर्थ जानना उनके लिए आवश्यक नहीं समझा जाता था। इससे उनकी स्मरण-शक्ति तो निश्चित रूप से तीव्र हो जाती थी, पर उनकी मनन, चिन्तन आदि अन्य मानसिक शक्तियों का विकास नहीं होता था।

दूसरा, बालकों को पहले पढ़ने का अभ्यास कराया जाता था और उसकी समाप्ति के पश्चात् लिखने का इससे उनका पर्याप्त समय नष्ट होता था और उनका सन्तुलित विकास भी नहीं होता था।

तीसरा, मौखिक शिक्षण पर इतना अधिक बल दिया जाता था कि बालकों को निरीक्षण, परीक्षण आदि व्यावहारिक क्रियाओं के लिए कोई अवसर प्राप्त नहीं होता था।

चौथा, डॉ० यूसुफ हुसेन के अनुसार—"मध्यकालीन शिक्षा-पद्धति में लचीलेपन का अभाव था। परिणामतः वह अत्यधिक अनम्य (Rigid) और अनिर्माणकारी (Non-creative) बन गई थी।"

पाँचवाँ, डॉ० यूसुफ हुसेन के शब्दों में—"मध्यकालीन शिक्षा-पद्धति में छात्रों में व्यावहारिक निर्णय प्रदान करने की क्षमता नहीं थी। वह अत्यधिक निष्प्राण और पुस्तकीय थी।"

अन्तिम, डॉ० यूसुफ हुसेन के विचारानुसार—**"यह कहना ऐतिहासिक दृष्टि से सत्य होगा कि मध्यकालीन शिक्षा-पद्धति, नेतृत्व के गुणों का विकास करने में विफल हुई। अतः वह जीवन के विभिन्न क्षेत्रों के लिए असाधारण व्यक्तियों की माँग की पूर्ति नहीं कर सकी।"**

"It would be historically true to assert that the medieval system of education failed to impart the qualities of leadership and thus ensure the supply of outstanding personalities in the different walks of life."

—**Dr. Yusuf Husain** : *Glimpses of Medieval Indian Culture*, p. 97.